अच्छा करने के लिए जिओ

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय राजस्थान

मनुष्य जीवन को सृष्टि के अन्दर सबसे दुलर्भ जीवन बताया गया है। मनुष्य पंचेन्द्रिय प्राणी है । मानव में चेतना का विकास सबसे अधिक है। ईश्वर ने मानव को सर्वश्रेष्ठ बनाया है। सत्कर्मों के कारण ही मानव जीवन प्राप्त होता है। जीवन नदी के दो तटों के समान है। धाराओं के उतार–चढ़ाव की तरह मानव का जीवन है। मानव जीवन में भी उतार–चढ़ाव आते रहते हैं। इसलिए सर्दव अच्छे कर्म करने का प्रयास करना चाहिए। मानव की सोच सकारात्मक होनी चाहिए, कार्य सकारात्मक होना चाहिए। सकारात्मकता मानव के विकास में सहायक होती है। मानव को यह सोचना चाहिए कि उसे जो सुख या दुःख मिल रहा है वह उसके कर्मों का परिणाम है। किसी को इसके लिए उत्तरदायी ठहराना नहीं चाहिए। यदि कोई सेवा कर रहा है तो यह मानना चाहिए कि पूर्व जन्म में मैंने उसकी सेवा की थी। जिसके प्रतिदान के रूप में वह मेरी सेवा कर रहा है। एक ही माता–पिता के पुत्रों में बहुत अन्तर देखा जाता है। कोई बहुत धन सम्पन्न हो जाता है, कोई बहुत विद्वान हो जाता है, कोई बहुत गरीब हो जाता है और कोई पागल होकर सड़कों पर घूमता हे। यह सयब मनुष्य के कर्मों का परिणाम है। सकारात्मक सोच यह शिक्षा देती है कि जो संयोग जुटाया गया है उसी का प्रतिफल वर्तमान जीवन है। यदि धन–दौलत अधिक है तो उसे सेवा कार्य में लगाना चाहिए। जो दूसरों के आंसू पोंछता है ईश्वर कभी उसकी आंखों में आंसू नहीं आने देता। अपना पेट तो सभी भर लेते हैं किन्तु जो दुसरों की भलाई करता है, दूसरों के लिए उसकी आवश्यकतानुसार सहायता करता है वह पूजनीय कहा जाता है। व्यक्ति अच्छा करने के लिए यदि अपना जीवन जीता है तो समाज में उसको प्रशंसा मिलती है। इसलिए सदैव अच्छे कर्म करने चाहिए।

भारतीय संस्कृति में ऐसे मूल्यों को महत्व दिया गया है कि समाज में सभी प्राणी सुखपूर्वक रह सके। भगवान् महावीर का यह सिद्धान्त है कि हर प्राणी का आदर करो– परस्परोपग्रहोजीवानाम्। इसका अर्थ है सभी प्राणी परस्पर मिलकर सहअस्तित्व के साथ रहे।

कोई किसी से बैर न करे, कोई किसी से रागद्वेष न करे। यही इस सूत्र का हार्द्र है। यह संसार सबका है किसी एक व्यक्ति या प्राणी का नहीं। इसलिए इसका उपभोग सभी संयम पूर्वक करें कोई किसी के जीवन में हस्तक्षेप न करे। प्रकृति मानव को सभी चीजे उपलब्ध करायी है। सूर्य का प्रकाश सभी लोगों के लिए है। वायु सभी के लिए है। सम्पूर्ण वायुमण्डल सभी के लिए है, आवश्यकता है इनके सदुपयोग की। यदि मानव त्यागपूर्वक इनका उपयोग करता है तो प्रकृति का खजाना कभी समाप्त होने वाला नहीं है। प्रकृति ने खुब दिया है, इसका त्यागपूर्वक उपयोग होना चाहिए। मानव एक सामाजिक प्राणी है स्वार्थ, परार्थ और परमार्थ की चेतना उसमें समाहित है अहिंसा की वृत्ति भी उसके अंतर्गत है। अहिंसा का तात्पर्य है जीव हिंसा न करना। इसके साथ ही साथ प्राणियों के साथ मैत्री, मुदिता, सहिष्णुता, समता आदि भी अहिंसा के ही पर्याय है। सादगी का भी अपना एक दर्शन है, इसे हम आत्मशांति का दर्शन कह सकते हैं। करुणा मानवीय संवेदना का एक ऐसा भाव है जिसमें मानव का हृदय विगलित होता चला जाता है। करुणा भाव कहीं भी, यहां तक कि नितांत अपरिचित प्राणी को भी पीड़ा–ग्रस्त देखकर उभर सकता है। करुणा भाव से ही संवेदना जगती है, व्यक्ति या प्राणी जो पीड़ित है उसकी छटपटाहट कभी–कभी द्रष्टा के मन में ऐसी पीड़ा पैदा कर देती है। वह दुःखी के दुःख को अपने आप में अनुभव करता है। यह संवेदना करुणा भाव से ही जग पाती है। करुणा वस्तुतः एक आत्म भाव है। आर्तग्रस्त प्राणी तो निमित्त मात्र होता है। सरल और सौम्य मानसिकता में करुणा भाव का निश्चित अस्तित्व पाया है। परमार्थ की आराधना में करुणा भाव का सर्वाधिक महत्व है, सच पूछा जाए तो करुणा के बिना परमार्थ हो ही नहीं सकता। जैन शास्त्रों में करुणा का ही पर्यायवाची शब्द अनुकम्पा है। जटायु को तड़पता देख श्री रामचन्द्रजी स्वयं विगलित हो गये। उन्होंने सीता को ढूंढ़ना छोड़ दिया और जटायु की सेवा करने लग गये। उस घायल पक्षी को गोद में उठाकर गले लगाया और प्यार से सहलाया। श्री रामचन्द्रजी भी उसका दुःख देख विचलित हो गये। यदि मनुष्य सभी प्राणियों के साथ मेल–जोल सद्भावना और समतापूर्वक रहता है तो उसके जीवन में शांति बनी रहती है।

शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिए सहअस्तित्व की कल्पना आवश्यक है। सहअस्तित्व का अर्थ है कि जीवन जितना हमे प्रिय है उतना ही अन्य प्राणियों को भी प्रिय है। आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् अर्थात् जो हमारे अनुकूल नहीं है वैसा आचरण हमें दूसरों के साथ भी नहीं करना चाहिए। यदि हम किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप किसी अन्य प्राणी के जीवन में करते है तो उसको दुःख होता है। इसलिए प्रेम से और सद्भावना से किसी भी प्राणी को वश में किया जा सकता है। अहिंसा से लेकर जियो और जीने दो का सिद्धान्त ही शांतिपूर्ण सहअस्तित्व की मुख्य धुरी है। आचार शुद्धि, व्यवहार शुद्धि और विचार शुद्धि के आधार पर मनुष्य बिना किसी अतीन्द्रिय सत्ता के सहयोग से स्वयं को विकसित बना सकता है। दया और करुणा का भाव ही शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के मूल में प्रतिष्ठित है। अतः शांतिपूर्ण सहअस्तित्व कोरा दर्शन न होकर जीवन दर्शन है, जो किसी भी जीव के अस्तित्व व गरिमा को स्थापित करता है।